

सी. आई. टी. सेन्ट्रल, कलकत्ता

बनाम

नेशनल ताज ट्रेडर्स

नवंबर 27, 1979

[वी.डी.तुलजापुरकर और ईएस वेंकटरमैया, जे.जे.]

आय कर अधिनियम, 1922, धारा 33 ख-धारा 33 ख का निर्माण जिसकी उप-धारा 4 के तहत न्यायाधिकरण की अपीलीय शक्तियों के दायरे पर आंशिक असर पड़ता है और उप-धारा 2 (ख) का प्रभाव उप-धारा (4) पर पड़ता है-चाहे धारा 33 ख की उप-धारा 2 (ख) का प्रभाव क्षीणन या कटौती का हो। उप-धारा 4 के तहत न्यायाधिकरण की अपीलीय शक्तियों को लागू करना।

प्रत्यर्थी द्वारा प्रस्तुत स्वैच्छिक विवरणी पर क्रमशः 31 मार्च, 1957 और मार्च 1958 को समाप्त होने वाले लेखा वर्षों के संबंध में, आयकर अधिकारी 'ई' वार्ड जिला ॥ (1) कलकत्ता ने इन वर्षों के लिए (1957-58 और 1958-59) रु। 7000 / - और रु. 7500 / इसे क्रमशः तीन भागीदारों, आशा देवी वैद, संतोष देवी वैद और सुगनी देवी वैद की अपंजीकृत फर्म के रूप में समान शेयरों के साथ बनाया गया है। 2 अगस्त,

1962 को आयकर आयुक्त ने कारण बताने के लिए नोटिस जारी किया कि उक्त आकलन को अधिनियम की धारा 33 बी के तहत क्यों नहीं लिया जाना चाहिए क्योंकि उन्होंने महसूस किया कि पूर्ण आकलन राजस्व के हितों के लिए प्रतिकूल होने के कारण गलत थे और आने वाले कर अधिकारी 'ई' वार्ड जिला ॥ (1) कलकत्ता का निर्धारिती के मामले में कोई क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र नहीं था। निर्धारिती को 3 अगस्त, 1962 को नोटिस दिया गया था और आयुक्त द्वारा सुनवाई 6 अगस्त, 1962 के लिए तय की गई थी। इस आधार पर कि कोई उपस्थित नहीं हुआ और स्थगन के लिए कोई आवेदन नहीं था, आयुक्त ने उस पर धारा 33 बी के तहत अपना आदेश पारित किया।

अपने उक्त आदेश द्वारा आयुक्त ने आयकर अधिकारी द्वारा किए गए आकलन को तीन आधारों पर रद्द कर दिया (ए) कि कुछ भागीदार नाबालिग थे और इसके परिणामस्वरूप कोई भी अपंजीकृत फर्म का दर्जा सौपा गया। अधिकारी स्पष्ट रूप से गलत था और इस प्रकार आकलन रद्द किए जाने के योग्य थे; (बी) कि लेखा पुस्तकें अविश्वसनीय थीं और आयकर अधिकारी द्वारा उनकी ठीक से जांच नहीं की गई थी, जिसके परिणामस्वरूप किए गए आकलन राजस्व के हितों के लिए प्रतिकूल थे और (सी) आयकर अधिकारी का उस मामले पर कोई क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र नहीं है जो आयकर अधिकारी, जिला ॥ कलकत्ता के अधिकार क्षेत्र में आता है और उचित अधिकार क्षेत्र वाले आयकर अधिकारी को कानून के अनुसार

निर्धारिती के रिकॉर्ड की जांच करने के बाद नए सिरे से मूल्यांकन करने का निर्देश दिया।

धारा 33 बी (3) के तहत अपीलीय न्यायाधिकरण में की गई अपीलों को स्वीकार कर लिया गया। यह पाया गया कि आयुक्त पूर्वाह्न 11:30 बजे पारित हुआ। एकतरफा बुरा था क्योंकि निर्धारिती को दिए गए नोट्स में 6 अगस्त, 1962 के दौरान किसी भी समय आपत्तियां दाखिल करने की अनुमति दी गई थीं, ट्रिबुनल ने निर्देश के साथ-साथ मामले को वापस भेज दिया। प्रतिवादी निर्धारिती को उचित वसर देने के बाद इसे नए सिरे से निस्तारित करें। अपीकर्ता के कहने पर, उच्च न्यायालय के संदर्भ में उच्च न्यायालय ने माना (ए) आयकर अधिनियम की धारा 33 बी के तहत आयुक्त क्षेत्राधिकार की धारणा कानून में वैध थी; (बी) ट्रिबुनलने आयुक्त के आदेश को खारिज करने में उचित रूप से कार्य किया, लेकिन, (सी) ट्रिबुनल ने आयुक्त को धारा 33 बी(1) के तहत कार्य करने का निर्देश देने में उचित रूप से कार्य नहीं किया क्योंकि दो साल की सीमा अवधि निर्धारित की गई थी उसके लिए धारा 33 बी(1) के तहत कार्य करने की धारा 33 बी(2) समाप्त हो चुकी थी। ऐसा करते हुए, उच्च न्यायालय ने माना कि उपधारा बी(2) का प्रावधान पूर्ण था और इसमें किसी अपीलीय प्राधिकारी द्वारा दिए निर्देश अनुसरण में पारित आयुक्त का एक पुनरीक्षण आदेश भी शामिल था।

न्यायालय ने प्रमाणपत्र द्वारा अपील की अनुमति देते हुए अभिनिर्धारित किया

1. आयकर अधिनियम की धारा 33बी की उप-धारा (1) के तहत, आय-कर अधिकारी के आदेशों को संशोधित करने की शक्ति आयुक्त को प्रदान की गई है, लेकिन ऐसी शक्ति का प्रयोग दो शर्तों द्वारा विनियमित किया जाता है, अर्थात् (ए) उसे संशोधित किए जाने के लिए मांगे गए आदेश को राजस्व के हितों के लिए प्रतिकूल होने के रूप में गलत मानना चाहिए और (बी) उसे निर्धारिती को इसे संशोधित करने से पहले सुनवाई का अवसर देना चाहिए। (2) (बी) नकारात्मक शब्दों की सीमा की अवधि निर्धारित करता है कि आदेश उप-धारा (1) के तहत संशोधित किए जाने के लिए मांगे गए आदेश की तारीख से दो साल की समाप्ति के बाद किया जाएगा। उपधारा(3) निर्धारिती को अपील को प्राथमिकता देने का अधिकार प्रदान करता है। आयुक्तों के आदेश के खिलाफ न्यायाधिकरण उप-ओं के तहत बनाया गया। (1) जबकि उप-एस। (4) इस तरह की अपील से निपटने में अपीलीय त्रयी की शक्ति को यह प्रावधान करके इंगित करता है कि "ऐसी अपील पर विचार किया जाएगा। उसी रूप में जैसे कि यह उप-धाराओं के तहत एक अपील थी। (1) एस. 33" दो संबंधित प्रावधानों के निष्पक्ष अध्ययन पर दो बातें स्पष्ट रूप से सामने आती हैं, अर्थात्, उप-धारा (2) (ख) और उप धारा (4) उपखंडों में निहित सीमा की पट्टी। (2) (ख) उप-धाराओं के तहत पुनरीक्षण आदेश पारित करने की आयुक्त

की शक्ति पर है। धारा 33(1) उप-धाराओं के तहत किया जाने वाला आदेश और वही इस अर्थ में निरपेक्ष प्रतीत होता है कि यह हर एक पर लागू होता है। उप धारा (4) के अनुसार अपीलीय न्यायाधिकरण के पास बहुत व्यापक शक्तियाँ हैं जो किसी अपील पर विचार करते समय होती हैं। धारा 33(1) दूसरे शब्दों में, अपीलीय न्यायाधिकार के पास उस पर अर्थात् अपील पर ऐसे आदेश पारित करने की शक्ति है जो उचित समझे। शब्द उस पर अपीली न्यायाधिकरण के अधिकार क्षेत्र को अपील की विषय-वस्तु तक सीमित करता है, जिसका अर्थ केवल यह है कि न्यायाधिकरण किसी ऐसे प्रश्न पर फैसला नहीं दे सकता है या कोई निष्कर्ष नहीं दे सकता है जो विवाद में नहीं है और जो विषय-वस्तु नहीं बनाता है। अपील लेकिन शब्द उस पर ऐसे आदेश पारित करें जो वह उचित समझें में सभी शक्तिया संभवतः वृद्धि की शक्ति को छोड़कर शामिल हैं जो धारा 31 द्वारा सहायक अपीलीय आयुक्त को प्रदान की जाती है और परिणामस्वरूप ट्रिबुनल के पास अपनी अपील का प्रयोग करने का अधिकार है। जिस आदेश के विरुद्ध अपील की गई है उसे खारिज करने और अपने निर्णय में की गई टिप्पणियों के आलोक में नए सिरे से मूल्यांकन करने का निर्देश देने की शक्तियाँ। दूसरे शब्दों में, धारा की उप-धारा (4) के तहत अपील से निपटते समय अपीलीय न्यायाधिकरण के पास समान शक्ति होती है। 33 बी.एफ इसका निर्णय दूसरे शब्दों में, धारा 33 की उप-धारा (4)के तहत अपील से निपटते समय अपीलीय न्यायाधिकरण के पास समान शक्ति होती है।

हुकमचंद मिल्स का मामला, 63 आई.टी.आर.232; लागू।

2. निर्माण के दो सिद्धांत कैसस अेमिसस से संबंधित हैं और दूसरा कानून को समग्र रूप से पढ़न के संबंध में अच्छी तरह से स्थापित है। पहले सिद्धांत के तहत, स्पष्ट आवश्यकता के मामले को छोड़कर और जब इसका कारण कानून के चारों कोनों में पाया जाता है, तब तक न्यायालय द्वारा एक कैसस अेमिसस प्रदान नहीं किया जा सकता है, लेकिन साथ ही एक कैसस अेमकसस का आसानी से अनुमान नहीं लगाया जाना चाहिए और उस उद्देश्य के लिए किसी कानून या धारा के सभी हिस्सों को एक साथ समझा जाना चाहिए और धारा के प्रत्येक खंड को संदर्भ और उसके अन्य खंडों के संदर्भ में समझा जाना चाहिए ताकि किसी विशेष प्रावधान पर रखा जाने वाला निर्माण एका सुसंगत अधिनियम बन सके। संपूर्ण कानून का यह तब और अधिक होगा जब किसी विशेष खंड का शाब्दिक निर्माण स्पष्ट रूप से बेतुके या असंगत परिणाम देता है जो विधायिका द्वारा अपेक्षित नहीं हो सकता है।

आर्टेमिड बनाम प्रोकोपियो, [1966] 1 क्यू. बी., 878, ल्यूक बनाम अंतर्देशीय राजस्व कॉम

मिशनर [1968] ए. सी. 557 और 577 अनुमोदन के साथ उद्धृत।

3. 30 मार्च, 1948 से धारा 33 बी को लागू करने का उद्देश्य आयुक्त को एक आयकर अधिकारी के गलत आदेशों को सही करने के लिए

पुनरीक्षण शक्तियाँ प्रदान करना था, जहां तक वे राजस्व के हितों के लिए हानिकारक थे। उपधारा की भाषा स्पष्ट रूप से सुझाव देता है कि उक्त शक्ति का प्रयोग आयुक्त द्वारा स्वप्रेरणा से करने पर विचार किया गया था, क्योंकि शुरूआती शब्दों से पता चलता है कि यह आयुक्त पर निर्भर था कि वह अधिनियम के तहत किसी भी कार्यवाही के रिकॉर्ड को मंगाए और उसकी जांच करे। रिकॉर्ड यदि वह संतुष्ट था कि आयकर अधिकारी द्वारा परित कोई आदेश राजस्व के हितों के प्रतिकूल होने के कारण गलत था, तो वह निर्धारिती को सुनवाई का अवसर देने के बाद उसे संशोधित कर सकता था। यह सच है कि उप धारा 2 बी ने उसकी शक्ति की सीमा को अवधि निर्धारित की है, बशर्ते कि दो साल की समाप्ति के बाद उप धारा 1 के तहत कोई आदेश नहीं दिया जाएगा। आदेश की तारीख को आयुक्त द्वारा संशोधित करने की मांग की गई और उप-एसका शाब्दिक निर्माण किया गया। 2 बी यह भी सुझाव देता है कि इसके द्वारा लगाई गई सीमा की पट्टी इस अर्थ में पूर्ण थी कि यह उप धाराओं के तहत किए जाने वाले हर प्रकार के आदेश पर लागू होती है। उप धारा (1) और किसी भी सी द्वारा दिए गए निर्देश के अनुसार उसके द्वारा किए जा सकने वाले स्वतः वाले आदेश के बीच कोई अंतर नहीं किया गया था। उप-धारा (3) किसी निर्धारिती को उप-धारा (1) और उप-धाराओं के तहत किए गए आयुक्त के आदेश के खिलाफ अपीलीय न्यायाधिकरण में अपील करने का अधिकार प्रदान किया गया है और उप धारा (4) प्राधिकरण के पास आयुक्त के विवादित आदेश से

इस तरह से निपटने का अधिकार था कि वह अपनी अपीलिय शक्तियों का प्रयोग करते हुए उचित समझे; उदाहरण के लिए, वह विवादित आदेश की पुष्टि कर सकता है, वह उस आदेश को निरस्त कर सकता है, या उसे खाली करने के बाद अपने निर्णय में उसके द्वारा किए गए प्रावधानों के आलोक में नए सिरे से मूल्यांकन करने के लिए मामले को आयुक्त को वापस भेज सकता है या वह रिमांड के लिए बुलाने के बाद आयकर अधिकारी के गलत आदेश को सुधार सकता है। इसके अलावा ऐसी कोई अवधि निर्धारित नहीं की गई थी जिसके भीतर आयुक्त के विवादित आदेश के खिलाफ अपील का न्यायाधिकरण द्वारा निपटारा किया जाना था और सामान्य रूप से दुर्लभ अवसरों पर ऐसी अपीलों की सुनवाई की जाती और आयकर अधिकारी के आदेश की तारीख से दो साल की समाप्ति से पहले उनका निपटारा किया जाता, जिसे आयुक्त द्वारा गलत माना जाता था। अक्सर ऐसी अपीलें दो साल की उक्त अवधि की समाप्ति के बाद सुनवाई के लिए आती थीं-एक तथ्य जो पूरी तरह से ज्ञात था और विधानमंडल के विचार के भीतर जब उसने 1948 में अधिनियम में धारा का परिचय दिया था।

4. विधायिका का इरादा अपीलिय शक्तियों को कम करने या कम करने का नहीं था जिसे उसने उप-धाराओं के तहत बहुत व्यापक शब्दों में अपीलिय न्यायाधिकरण को प्रदान किया। उप धारा (4) उप-धारा 2 (बी) को लागू करके आयकर अधिकारी के गलत आदेश को उलटने की आयुक्त

की शक्ति पर एक समय सीमा निर्धारित की गई है, जब मिशनरी स्वतः संज्ञान नहीं ले रहा था, बल्कि अपीलीय प्राधिकरण के निर्देश के अनुसरण या पालन में ऐसा करने की मांग कर रहा था। कोई भी विपरीत और शाब्दिक निर्माण स्पष्ट रूप से बेतुका परिणाम की ओर ले जाएगा, क्योंकि एक मामले में अपीलीय प्राधिकरण (न्यायाधिकरण) ने वर्तमान मामले की तरह पाया है कि-

(क) आयकर अधिकारी का आदेश स्पष्ट रूप से गलत है क्योंकि यह राजस्व के हितों के लिए प्रतिकूल है और (बी) आयुक्त का आदेश अस्थिर तथा प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के उल्लंघन के रूप में; यह अपीलीय प्राधिकरण के अपनी शक्तियों का प्रयोग करने के लिए मुश्किल होगा और आयुक्त के आदेश में पूरी तरह से हस्तक्षेप करने से इनकार करते हैं, तो आयुक्त के गलत आदेश को कायम रखने के बराबर होगा, और न ही आयकर अधिकारी के आदेश के बारे में बात, उसके लिए, स्थायी परिणाम होगा आयकर अधिकारी का आदेश जो स्पष्ट रूप से पाया गया था वह राजस्व के लिए प्रतिकूल होने के रूप में गलत है। इसके अलावा, इसके लागू करने के अभ्यास में देर से अधिकार यह स्वयं न्यायाधिकरण के लिए खुला था कि वह उससे रिमांड रिपोर्ट मांगे या तो आयुक्त या आयकर अधिकारी और आयकर में सुधार करें तथा निर्धारिती को अवसर देने के बाद और ऐसा करने में अधिकारी का गलत आदेश सीमा का कोई सवाल ही नहीं उठेगा। यह न्यायाधिकरण के लिए समान रूप से खुला था। आयुक्त

के आदेश को दरकिनार कर दें और मामले को सीधे आय को भेज दें यह कर अधिकारी अपने गलत आदेश को सुधारने के लिए आवश्यक निर्देश दे रहा है और मान लीजिए, उप-धाराओं के तहत सीमा की सीमा। नए सिरे से मूल्यांकन करने की सायनर की शक्ति, न कि आयकर अधिकारी पर अपितु केवल आयोग पर थी। यदि यह सही स्थिति है तो यह गंभीर रूप से विसंगत है कि न्यायाधिकरण आयुक्त के आदेश और रिमांड को रद्द करने की स्थिति में नहीं होना चाहिए। मामला नए सिरे से मूल्यांकन करने के लिए आयुक्त को वापस कर दिया गया क्योंकि इस बीच दो साल की सीमा की अवधि समाप्त हो गई है, क्योंकि इसका मतलब यह होगा कि न्यायाधिकरण को सीधे वांछित प्रभाव प्राप्त करने से रोका गया था। आयुक्त लेकिन यह अप्रत्यक्ष रूप से आयकर अधिकारी के माध्यम से ऐसा कर सकता है। उप-धारा (2)(ख) का शाब्दिक निर्माण इस तरह से स्पष्ट रूप से नेतृत्व करेगा बेटुके और विसंगत परिणाम, जो विधानमंडल द्वारा अभिप्रेत नहीं थे। इसलिए, उप-धारा 2 (बी) के शब्दों को लागू माना जाना चाहिए। संशोधन में आयुक्त के स्वतः संज्ञान आदेशों को केवल करें और आदेशों को नहीं अपीलीय न्यायाधिकरण द्वारा पारित किसी निर्देश या आदेश के अनुसार उसके द्वारा किया गया पाठ और उसके अन्य खंड ताकि निर्माण उस विशेष पर रखा जाए तो प्रावधान पूरे कानून का एक सुसंगत अधिनियमन करता है।

आय कर आयुक्त v. किशोर सिंह कल्याण सिंह सोलंकी, 39, आई. टी. आर. 522 (बॉम्बे); स्वीकृत किया गया।

यह अच्छी तरह से तय किया गया है कि राजकोषीय कानून का सिद्धांत माना जाना चाहिए कि सख्ती से केवल कर प्रावधानों पर लागू होता है जैसे कि शुल्क प्रावधान या दंड अधिरोपित करने वाला प्रावधान और कानून के उन हिस्सों के लिए नहीं जो मशीन के प्रावधानों को कम करें और किसी भी तरह से नहीं फैला सकते। धारा 33 बी का प्रावधान प्रभारित माना जाए

6. एक केसस ओमिसस का आसानी से अनुमान नहीं लगाया जा सकता है और यह नहीं हो सकता है कि केवल इस तथ्य से अनुमान लगाया गया कि दोनों एस. एस. 33 बी और 34 (3) दूसरे के साथ अधिनियम में उसी संशोधन अधिनियम 1948 द्वारा प्रावधान को एक साथ जोड़ा गया था और कि पूर्व के मामले में एक ढील का प्रावधान नहीं किया गया था जैसा कि बाद के प्रावधान के मामले में किया गया, सबसे पहले क्योंकि दोनों प्रावधान अलग-अलग क्षेत्रों में संचालित होते हैं और दूसरी बात यह है कि [1980] 2 एस. सी. आर. की तुलना किए बिना ऐसा करना अनुचित होगा। संशोधनों के विभिन्न चरणों के माध्यम से इन प्रावधानों का प्रत्येक सेट अधिनियम 1961 के प्रतिबंध को हटाने या शिथिल करने का आवश्यक प्रावधान किया गया है।

धारा 263 (3) में चाहे जो भी हो सीमा का बहुत महत्व नहीं है। एक्स मेजर कौटेल्ला (जिस पर परस्पर विरोधी विचार प्राप्त होते हैं) है या नहीं यह स्पष्ट है कि

एस. 263 (3) 1961 के अधिनियम को एक पूर्व प्रमुख प्रावधान के रूप में माना जाना चाहिए। मान लीजिए, उस समय जब उक्त प्रावधान 1961 के अधिनियम में अधिनियमित किया गया था, बॉम्बे उच्च न्यायालय का दृष्टिकोण इस क्षेत्र में था और इसके विपरीत कोई निर्णय नहीं था। स्पष्ट रूप से, इसलिए, एस का अधिनियमन धारा 263 (3) का होना चाहिए। कानून की घोषणात्मक माना जाता है जो पहले से ही प्रचलित था और यह स्थिति आयकर विधेयक 1961 के खंडों पर टिप्पणियों में यह स्पष्ट किया गया है। जहाँ यह कहा गया है कि उप-धारा (3) एस. 263 नया और बुरा जोड़ा गया था।

बॉम्बे उच्च न्यायालय का फैसला सोलंकी के मामले में अनुभव की गई कठिनाई से उबरने के लिए (गलत तरीके से 'के कारण' कहा गया)। एक्स मेजर कौटेल्ला का सिद्धांत 1922 एक्ट में न्यायिक घोषणा के परिणामस्वरूप कानूनी स्थिति प्राप्त करें।

सी. आई. टी. वी. साबित्री देवी अग्रवाल, 77 आई. टी. आर. 934 अपास्त की गई।

पूरन मॉल का मामला, 96 आई. टी. आर. 390; अब प्रभावी रहेगा।

सिविल अपीलिय न्यायनिर्णयः सिविल अपील सं 171-172/1973 .

कलकत्ता उच्च न्यायालय द्वारा आई. टी. संदर्भ संख्या 117/67 में पारित निर्णय और आदेश दिनांकित 9-3-1972 से उत्पन्न।

अपीलार्थी की ओर से डी. वी. पटेल, एस. पी. नायर और सुश्री ए. सुभाशिनी।

प्रतिवादी की ओर से बी. बी. आहूजा (न्यायमित्र)।

न्यायालय का निर्णय तुलजापुरकर, जे द्वारा पारित किया गया-

ये दो अपीलें प्रमाणपत्र द्वारा एक मुद्दा उठाती हैं कि उचित निर्माण के संबंध में महत्वपूर्ण प्रश्न भारतीय आयकर अधिनियम, 1922 की धारा 33 बी के दायरे पर विशेष रूप से उप धारा (4) व उप धारा (2) (ख) तक प्रभावी रहेगा।

प्रत्यर्थी द्वारा प्रस्तुत स्वैच्छिक विवरणी पर क्रमशः 31 मार्च, 1957 और मार्च 1958 को समाप्त होने वाले लेखा वर्षों के संबंध में, आयकर अधिकारी 'ई' वार्ड जिला ॥ (1) कलकत्ता ने इन वर्षों के लिए (1957-58 और 1958-59) रु। 7000 / - और रु. 7500 / इसे क्रमशः तीन भागीदारों, आशा देवी वैद, संतोष देवी वैद और सुगनी देवी वैद की अपंजीकृत फर्म के रूप में समान शेयरों के साथ बनाया गया है।

2 अगस्त, 1962 को, आयकर आयुक्त ने यह बताने के लिए एक नोटिस जारी किया कि अधिनियम की धारा 33-बी के तहत उक्त मूल्यांकन

को रद्द क्यों नहीं किया जाना चाहिए क्योंकि उन्हें लगा कि पूर्ण किए गए मूल्यांकन पूर्व होने के कारण गलत थे। राजस्व के हित के लिए न्यायिक और आयकर अधिकारी, बी वार्ड, जिला ॥ (1) कलकत्ता के पासि म्मि निर्धारिती के मामले पर कोई क्षेत्रीय क्षेत्राधिकार नहीं था। 3 अगस्त, 1962 को निर्धारिती को नोटिस दिया गया था, और आयुक्त द्वारा सुनवाई 6 अगस्त, 1962 के लिए तय की गई थी। इस आधार पर कि कोई भी उपस्थित नहीं हुआ और स्थगन के लिए कोई आवेदन नहीं था, आयुक्त ने एस के तहत अपना आदेश पारित किया। उक्त तिथि को 33-बी एक पक्षीय।

अपने उक्त आदेश से आयुक्त ने आयकर अधिकारी द्वारा किए गए आकलन को तीन आधारों पर रद्द कर दिया: (ए) कि कुछ साझेदार नाबालिग थे और किसी भी साझेदारी समझौते में प्रवेश करने में सक्षम नहीं थे, जिसके परिणामस्वरूप आयकर अधिकारी द्वारा निर्धारिती को सौंपी गई अपंजीकृत फर्म की स्थिति स्पष्ट रूप से गलत थी और इस तरह मूल्यांकन रद्द किया जाना चाहिए, (बी) कि खाते की किताबें अविश्वसनीय थीं और आयकर अधिकारी द्वारा उनकी उचित जांच नहीं की गई थी परिणाम यह हुआ कि किए गए आकलन राजस्व के हितों के लिए प्रतिकूल थे और (सी) संबंधित आयकर अधिकारी के पास उस मामले पर कोई क्षेत्रीय क्षेत्राधिकार नहीं था जो आयकर अधिकारी, जिला ॥ (II) कलकत्ता के अधिकार क्षेत्र में आता था , और आआईटी .ओ.

को निर्देशित किया । कानून के अनुसार निर्धारिती के रिकॉर्ड की जांच करने के बाद नए सिरे से आकलन करने का उचित अधिकार क्षेत्र होना।

धारा 33-बी (3) के तहत अपीलीय न्यायाधिकरण को दी गई अपील में प्रतिवादी-निर्धारिती ने विभिन्न आधारों पर आयुक्त के उक्त आदेश को चुनौती दी। ट्रिब्यूनल ने प्रतिवादी-निर्धारिती के अन्य सभी तर्कों को नकारते हुए, निष्कर्ष निकाला कि तथ्यों के गुण-दोष के आधार पर आयुक्त द्वारा धारा 33-बी के तहत क्षेत्राधिकार की धारणा को उचित ठहराया गया, लेकिन यह माना गया कि आयुक्त प्राकृतिक न्याय की आवश्यकताओं के अनुरूप नहीं थे। प्रतिवादी निर्धारिती को यह बताना कि उसे किस मामले को पूरा करना है और उसे समझाने का उचित अवसर देना। ट्रिब्यूनल ने नोट किया कि आयुक्त ने सुबह 11-30 बजे मामले का निपटारा कर दिया था जब प्रतिवादी-निर्धारिती की ओर से कोई भी उपस्थित नहीं हुआ था, जबकि बाद में दिए गए नोटिस में 6 अगस्त 1962 के दौरान किसी भी समय आपत्तियाँ दर्ज करने की अनुमति दी गई थी और आपत्तियां दर्ज की गई थीं। बाद में दिन में प्रतिवादी-निर्धारिती द्वारा दायर किया गया था। इसलिए, ट्रिब्यूनल ने अपील की अनुमति दी, 6 अगस्त, 1962 के आयुक्त के आदेश को निरस्त कर दिया और प्रतिवादी-निर्धारिती को उचित अवसर देने के बाद इसे नए सिरे से निपटाने के निर्देश के साथ मामले को उनके पास भेज दिया।

ट्रिब्यूनल के उपरोक्त आदेश दिनांक 5 जुलाई, 1965 से व्यथित महसूस करते हुए प्रतिवादी ने उक्त आदेश से उत्पन्न होने वाले कानून के छह प्रश्नों के एक सेट को कलकत्ता उच्च न्यायालय को संदर्भित करने की मांग की, लेकिन ट्रिब्यूनल ने केवल निम्नलिखित दो प्रश्नों को संदर्भित किया ।

उच्च न्यायालय की राय:

(1) आयकर अधिनियम की धारा 33 बी के तहत आयुक्त क्षेत्राधिकार की धारणा कानून में वैध थी;

(2) ट्रिब्यूनल ने आयुक्त के आदेश को खारिज करने में उचित रूप से कार्य किया, उच्च न्यायालय ने 9 मार्च 1972 के अपने निर्णय द्वारा संदर्भ (आई.टी.संदर्भ संख्या 117, 1967) का निपटारा कर दिया, मान: 1. आयकर अधिनियम की धारा 33 बी की उप-धारा (1) के तहत, आय-कर अधिकारी के आदेशों को संशोधित करने की शक्ति आयुक्त को प्रदान की गई है, लेकिन ऐसी शक्ति का प्रयोग दो शर्तों द्वारा विनियमित किया जाता है, अर्थात् (ए) उसे संशोधित किए जाने के लिए मांगे गए आदेश को राजस्व के हितों के लिए प्रतिकूल होने के रूप में गलत मानना चाहिए और (बी) उसे निर्धारिती को इसे संशोधित करने से पहले सुनवाई का अवसर देना चाहिए। (2) (बी) नकारात्मक शब्दों की सीमा की अवधि निर्धारित करता है कि आदेश उप-धारा (1) के तहत संशोधित किए जाने के लिए

मांगे गए आदेश की तारीख से दो साल की समाप्ति के बाद किया जाएगा। उपधारा (3) निर्धारिती को अपील को प्राथमिकता देने का अधिकार प्रदान करता है। आयुक्तों के आदेश के खिलाफ न्यायाधिकरण उप-धारा (1) के तहत बनाया गया। जबकि उप-धारा (4) इस तरह की अपील से निपटने में अपीलीय त्रयी की शक्ति को यह प्रावधान करके इंगित करता है कि "ऐसी अपील पर विचार किया जाएगा। उसी रूप में जैसे कि यह उप-धाराओं के तहत एक अपील थी। (1) एस. 33" दो संबंधित प्रावधानों के निष्पक्ष अध्ययन पर दो बातें स्पष्ट रूप से सामने आती हैं, उच्च न्यायालय ने सीआईटी में असम उच्च न्यायालय के दृष्टिकोण को प्राथमिकता दी । सी.आई.टी.बनाम साबित्री देबी अग्रवाल, (1970) 77 आईटीआर 934 सीआईटी में बॉम्बे हाई कोर्ट के विचार के अनुसार, आयकर कमिश्नर बनाम किशोरसिंह कल्याणसिंह सोलंकी, राजस्व ने उच्च न्यायालय के उपरोक्त दृष्टिकोण को चुनौती देते हुए इस न्यायालय में अपील की है।

चूंकि प्रश्न अधिनियम की धारा 33-बी के उचित निर्माण से संबंधित है, जिसका विशेष संबंध उप-धारा के तहत ट्रिब्यूनल की अपीलीय शक्तियों के दायरे पर है। (4) उसका और उप-धारा का प्रभाव। (2) (बी) उस पर एस 33-बी के भौतिक प्रावधानों पर ध्यान देना वांछनीय होगा। उपधारा के अंतर्गत. (1) आयकर अधिकारियों के आदेशों को संशोधित करने के लिए आयुक्त को शक्ति प्रदान की गई है, लेकिन ऐसी शक्ति का प्रयोग यहां उल्लिखित दो शर्तों द्वारा नियंत्रित किया जाता है, अर्थात्, (ए) उसे

संशोधित किए जाने वाले आदेश को गलत मानना चाहिए क्योंकि राजस्व के हितों के प्रति पूर्वाग्रहपूर्ण होने के कारण और (बी) उसे इसे संशोधित करने से पहले निर्धारिती को सुनवाई का अवसर देना होगा। उप-धारा (2) (बी) यह प्रदान करते हुए नकारात्मक शब्दों में सीमा की अवधि निर्धारित करता है कि "संशोधित किए जाने वाले आदेश की तारीख से दो साल की समाप्ति के बाद उप-धारा (1) के तहत कोई आदेश नहीं दिया जाएगा।" उप-धारा (3) निर्धारिती को उपधारा के तहत आयुक्त के आदेश के खिलाफ अपीलीय न्यायाधिकरण में अपील करने का अधिकार प्रदान करता है। (1) जबकि उप-धारा (4) ऐसी अपील से निपटने में अपीलीय न्यायाधिकरण की शक्तियों को इंगित करता है कि "ऐसी अपील को उसी तरीके से निपटाया जाएगा जैसे कि यह धारा 33 की उप-धारा (1) के तहत एक अपील थी"। दो संबंधित प्रावधानों, अर्थात् उप-धारा को निष्पक्ष रूप से पढ़ने पर दो बातें स्पष्ट रूप से सामने आती हैं। (2) (बी) और उप-सेक। (4). उप-सेकंड में निहित सीमा की पट्टी। (2) (बी) उप-धारा के तहत पुनरीक्षण आदेश पारित करने की आयुक्त की शक्ति पर है। (1) और यह इस अर्थ में पूर्ण प्रतीत होता है कि यह उप-धारा के तहत किए जाने वाले प्रत्येक आदेश पर लागू होता है। (1). साथ ही उप-सेक्शन (4) अपीलीय न्यायाधिकरण को बहुत व्यापक शक्तियाँ प्रदान करता है जो उसे धारा 33 (1) के तहत अपील से निपटते समय प्राप्त होती हैं। दूसरे शब्दों में, अपीलीय न्यायाधिकरण के पास "उस पर ऐसे आदेश पारित करने की

शक्ति है। "।इ। अपील पर) जैसा वह उचित समझे"। हुकुमचंद मिल्स मामले में इस न्यायालय ने स्पष्ट किया है कि "उस पर" शब्द अपीलीय न्यायाधिकरण के अधिकार क्षेत्र को अपील के विषय-वस्तु तक सीमित करता है, जिसका अर्थ केवल यह है कि ट्रिब्यूनल किसी ऐसे प्रश्न पर निर्णय नहीं दे सकता या कोई निष्कर्ष नहीं दे सकता जो विवाद में नहीं है और जो अपील का विषय-वस्तु नहीं बनाता है, लेकिन शब्द "उस पर ऐसे आदेश पारित करें जो वह उचित समझे" में सभी शक्तियां शामिल हैं (संभवतः की शक्ति को छोड़कर) संवर्द्धन) जो धारा 31 द्वारा सहायक अपीलीय आयुक्त को प्रदान किए जाते हैं और परिणामस्वरूप ट्रिब्यूनल के पास अपनी अपीलीय शक्तियों का प्रयोग करते हुए अपील किए गए आदेश को रद्द करने और अपने फैसले में की गई टिप्पणियों के आलोक में नए मूल्यांकन का निर्देश देने का अधिकार है। दूसरे शब्दों में, धारा 33-बी की उप-धारा (4) के तहत अपील से निपटने के दौरान अपीलीय न्यायाधिकरण के पास समान शक्ति होती है। हमारे विचार के लिए यह सवाल उठता है कि क्या मामले को नए सिरे से निपटाने के लिए ऐसा निर्देश दिया गया है। उप-धारा के तहत निर्धारित सीमा की अवधि होने पर अपीलीय न्यायाधिकरण द्वारा आयुक्त को दिया जा सकता है। (2) (बी) समाप्त हो गया है ? दूसरे शब्दों में, क्या एस. 33-बी की उप-धारा (2) (बी) में उप-धारा (4) के तहत ट्रिब्यूनल की अपीलीय शक्तियों को क्षीण करने या कम करने का प्रभाव है?

राजस्व के वकील ने तर्क दिया कि यह एक सुस्थापित सिद्धांत है कि किसी धारा या कानून के सभी हिस्सों को एक साथ समझा जाना चाहिए और धारा के प्रत्येक खंड को संदर्भ और उसके अन्य खंडों के संदर्भ में समझा जाना चाहिए ताकि किसी विशेष प्रावधान पर किया गया निर्माण संपूर्ण कानून का सुसंगत अधिनियम बनाता है। उन्होंने आगे आग्रह किया कि धारा 33-बी (1) के तहत आयुक्त को पुनरीक्षण शक्ति प्रदान करने का उद्देश्य स्पष्ट रूप से आयकर अधिकारी के गलत आदेशों को ठीक करना था, जहां तक वे राजस्व के हितों के लिए प्रतिकूल थे और ऐसा उद्देश्य होगा यदि उप-सेकंड में सीमा की बाधा निहित हो तो पराजित हो जाओ। (2) (बी) धारा 33-बी (4) के तहत अपील में अपीलीय न्यायाधिकरण द्वारा दिए गए निर्देश या आदेश के अनुसरण में या उस मामले के लिए आयुक्त द्वारा पारित पुनरीक्षण आदेशों पर लागू माना जाता है। यदि मामला उन न्यायालयों में ले जाया जाता है तो उच्च न्यायालय या सुप्रीम कोर्ट। उनके अनुसार प्रावधान को उपधारा में समझना उचित होगा। (2) (बी) उप-धारा के तहत आयुक्त द्वारा पारित स्वतः संज्ञान पुनरीक्षण आदेशों पर लागू होने के नाते। (1) और अपील में ट्रिब्यूनल द्वारा उसे जारी किए गए निर्देश के अनुसरण में उसके द्वारा पारित आदेशों के लिए नहीं। उन्होंने आग्रह किया कि ऐसा कोई कारण नहीं है कि उप-धारा. (2) (बी) को ट्रिब्यूनल को प्रदत्त अपीलीय शक्तियों को क्षीण करने या कम करने के प्रभाव के रूप में माना जाना चाहिए। उन्होंने आगे आग्रह किया कि कोई भी तर्क अधिनियम की

धारा 33-बी में धारा 34 (3) के दूसरे प्रावधान के समान प्रावधान की अनुपस्थिति पर आधारित नहीं हो सकता है। अपने तर्क के समर्थन में उन्होंने सोलंकी मामले (सुप्रा) में बॉम्बे उच्च न्यायालय के फैसले पर मजबूत भरोसा जताया था।

दूसरी ओर, निर्धारिती के वकील ने उच्च न्यायालय में हमारी स्वीकृति के लिए यह कहते हुए प्रचार किया कि दोनों एस.एस. 33-बी और 34 (3) को दूसरे प्रावधान के साथ उसी संशोधन अधिनियम 1948 द्वारा अधिनियम में पेश किया गया था, लेकिन एस 33-बी में उप-धारा में निहित सीमा की बाधा को हटाने या शिथिल करने का कोई प्रावधान नहीं है। (2) (बी) बनाया गया था और इसलिए यह अदालत का काम नहीं था कि वह कैसस ओमिसस की आपूर्ति करे। उन्होंने इस तथ्य पर भी भरोसा किया कि 1961 के अधिनियम में धारा 263 (3) में आवश्यक प्रावधान अधिनियमित किया गया है, जिससे यह भी पता चलता है कि 1922 के अधिनियम की धारा 33-बी में इस तरह के प्रावधान की अनुपस्थिति में उप-धारा की बाधा . (2) (बी) आयुक्त के हर आदेश पर लागू होता था, भले ही यह स्वप्रेरणा से या अपीलीय प्राधिकारी द्वारा जारी निर्देश के अनुसरण में बनाया गया हो। उनके अनुसार उपधारा में निहित सीमा की सीमा के बाद से। (2) (बी) सेक्शन का। 33-बी हमेशा निर्धारिती के लाभ के लिए संचालित होता है क्योंकि यह मूल्यांकन आदेशों को अंतिम रूप देता है, उप-धारा के तहत ट्रिब्यूनल की अपीलीय शक्तियां। (4) को इस हद

तक कम कर दिया गया माना जाना चाहिए कि यदि तब तक सीमा समाप्त हो चुकी है, तो ट्रिब्यूनल नए मूल्यांकन के लिए मामले को आयुक्त के पास नहीं भेज सकता है।

निर्माण के दो सिद्धांत - एक कैसस ओमिसस से संबंधित है और दूसरा कानून को समग्र रूप से पढ़ने के संबंध में अच्छी तरह से स्थापित प्रतीत होता है। पूर्व के संबंध में कानून का निम्नलिखित कथन मैक्सवेल ऑन इंटरप्रिटेशन ऑफ स्टैट्यूट्स (12 वें संस्करण) में पृष्ठ 33 पर दिखाई देता है:

"चूक का अनुमान नहीं लगाया जाना चाहिए-" यह शाब्दिक निर्माण के सामान्य नियम का परिणाम है कि किसी कानून में कुछ भी जोड़ा या हटाया नहीं जा सकता है जब तक कि इस अनुमान को उचित ठहराने के लिए पर्याप्त आधार न हो कि विधायिका का इरादा कुछ ऐसा था जिसे उसने व्यक्त करना छोड़ दिया। लॉर्ड मोर्से ने कहा: संसद के अधिनियम में उन शब्दों को पढ़ना एक मजबूत बात है जो वहां नहीं हैं, और स्पष्ट आवश्यकता के अभाव में ऐसा करना एक गलत बात है। लॉर्ड लोरबर्न एल.सी. ने कहा, हम संसद के किसी अधिनियम में शब्दों को पढ़ने के हकदार नहीं हैं, जब तक कि इसके लिए स्पष्ट कारण अधिनियम के चारों कोनों

में न पाया जाए। किसी क़ानून में प्रावधान न किए गए मामले को केवल इसलिए नहीं निपटाया जाना चाहिए क्योंकि ऐसा कोई अच्छा कारण नहीं दिखता कि इसे क्यों छोड़ा जाना चाहिए था, और परिणामस्वरूप यह चूक अनजाने में हुई प्रतीत होती है।"

बाद वाले सिद्धांत के संबंध में कानून का निम्नलिखित कथन मैक्स-वेल में पृष्ठ 47 पर दिखाई देता है:

एक क़ानून को समग्र रूप से पढ़ा जाना चाहिए -"लिंगन कॉलेज केस (1595) 3 सह प्रतिनिधि 58 बी, पृष्ठ 59 बी के मामले में यह हल किया गया था कि संसद के एक अधिनियम के अच्छे व्याख्याता को सभी हिस्सों पर एक साथ निर्माण करना चाहिए, और केवल एक भाग का ही नहीं। किसी क़ानून के प्रत्येक खंड को अधिनियम के संदर्भ और अन्य खंडों के संदर्भ में समझा जाना चाहिए, ताकि जहां तक संभव हो, पूरे क़ानून का एक सुसंगत अधिनियम बनाया जा सके। (प्रति) कनाडा शुगर रिफ़ाइनिंग कंपनी लिमिटेड में लॉर्ड डेवी बनाम आर. 1898 एसी 735 (कनाडा))।"

दूसरे शब्दों में, पहले सिद्धांत के तहत स्पष्ट आवश्यकता के मामले को छोड़कर न्यायालय द्वारा एक कैसस ऑमिसियस प्रदान नहीं किया जा सकता है और जब इसका कारण क़ानून के चारों कोनों में पाया जाता है, लेकिन साथ ही एक कैसस ऑमिसियस नहीं होना चाहिए आसानी से

अनुमान लगाया जाना चाहिए और उस उद्देश्य के लिए किसी क़ानून या अनुभाग के सभी हिस्सों को एक साथ समझा जाना चाहिए और अनुभाग के प्रत्येक खंड को संदर्भ और उसके अन्य खंडों के संदर्भ में समझा जाना चाहिए ताकि किसी विशेष प्रावधान पर किया जाने वाला निर्माण एक सुसंगत हो सके संपूर्ण क़ानून का अधिनियमन. यह तब और अधिक होगा जब किसी विशेष खंड का शाब्दिक निर्माण स्पष्ट रूप से बेतुके या असंगत परिणाम देता है जो विधायिका द्वारा अपेक्षित नहीं हो सकता है। "अनुचित परिणाम उत्पन्न करने का इरादा", आर्टेमिड बनाम प्रोकोपिड में डैनकवर्ट्स एलजे ने कहा, "यदि कोई अन्य निर्माण उपलब्ध है तो इसे किसी क़ानून में शामिल नहीं किया जाना चाहिए"। जहां शब्दों को शाब्दिक रूप से लागू करना "कानून के स्पष्ट इरादे को हरा देगा और पूरी तरह से अनुचित परिणाम देगा" हमें "शब्दों के साथ कुछ हिंसा करनी होगी" और इस तरह उस स्पष्ट इरादे को प्राप्त करना होगा और एक तर्कसंगत निर्माण करना होगा, (ल्यूक बनाम में लॉर्ड रीड के अनुसार) आई . आर. सी ., 1968 ए.सी. 557 जहां पृष्ठ 577 पर उन्होंने यह भी कहा: "यह कोई नई समस्या नहीं है, हालांकि प्रारूपण का हमारा मानक ऐसा है कि यह शायद ही कभी उभरता है।" इन सिद्धांतों के प्रकाश में हमारे पास होगा एस 33-बी के संदर्भ और अन्य खंडों के संदर्भ में उप-धारा (2) (बी) का अर्थ लगाना।

धारा 33-बी को भारतीय आयकर अधिनियम, 1922 में आयकर और व्यापार लाभ कर (संशोधन) अधिनियम, 1948 द्वारा 30 मार्च, 1948 से

लागू किया गया था और इसे पेश करने का उद्देश्य स्पष्ट रूप से प्रदान करना था आयुक्त को एक आयकर अधिकारी के गलत आदेशों को ठीक करने की पुनरीक्षण शक्तियाँ, जहाँ तक वे राजस्व के हितों के लिए प्रतिकूल थे। उपधारा की भाषा. (1) स्पष्ट रूप से सुझाव देता है कि उक्त शक्ति का प्रयोग आयुक्त द्वारा स्वतः संज्ञान से करने पर विचार किया गया था क्योंकि शुरुआती शब्दों से पता चलता है कि यह आयुक्त पर निर्भर था कि वह अधिनियम के तहत किसी भी कार्यवाही के रिकॉर्ड को मंगाए और उसकी जांच करे। रिकॉर्ड करें यदि वह संतुष्ट था कि आयकर अधिकारी द्वारा पारित कोई भी आदेश राजस्व के हितों के प्रतिकूल होने के कारण गलत था, तो वह निर्धारिती को सुनवाई का अवसर देने के बाद उसे संशोधित कर सकता था। यह सच है कि उप-सेक्शन (2) (बी) ने उसकी शक्ति पर सीमा की अवधि निर्धारित की, यह प्रदान करते हुए कि उप-धारा के तहत कोई आदेश नहीं दिया जाएगा। (1) आयुक्त द्वारा संशोधित किए जाने वाले आदेश की तारीख से दो वर्ष की समाप्ति के बाद और उप-धारा का शाब्दिक निर्माण। (2) (बी) यह भी सुझाव देता है कि इसके द्वारा लगाई गई सीमा की सीमा इस अर्थ में पूर्ण थी कि यह उप-धारा के तहत किए जाने वाले हर प्रकार के आदेश पर लागू होती है। (1) और स्वतः संज्ञान आदेश और किसी अपीलीय या अन्य उच्च प्राधिकारी द्वारा दिए गए निर्देश के अनुसार उसके द्वारा दिए गए आदेश के बीच कोई अंतर नहीं किया गया था, लेकिन सवाल यह है कि क्या उस प्रावधान को ऐसी शाब्दिक संरचना दी जानी

चाहिए? जैसा कि पहले उप-सेक्शन(3) में कहा गया है। एक निर्धारिती को उप-धारा के तहत आयुक्त के आदेश के खिलाफ अपीलीय न्यायाधिकरण में अपील करने का अधिकार प्रदान किया गया। (1) और उप-धारा (4) के तहत ट्रिब्यूनल के पास आयुक्त के आक्षेपित आदेश से ऐसे तरीके से निपटने का अधिकार था जैसा वह अपनी अपीलीय शक्तियों के प्रयोग में उचित समझे, उदाहरण के लिए, वह आक्षेपित आदेश की पुष्टि कर सकता था, वह कर सकता था वार्षिक उस आदेश को रद्द करने के बाद, वह अपने फैसले में की गई टिप्पणियों के अवलोकन में नए सिरे से मूल्यांकन करने के लिए मामले को आयुक्त के पास वापस भेज सकता है या रिमांड रिपोर्ट मांगने के बाद, गलत आदेश को सुधार सकता है। आयकर अधिकारी. इसके अलावा ऐसी कोई अवधि निर्धारित नहीं थी जिसके भीतर आयुक्त के विवादित आदेश के खिलाफ अपील का निपटारा ट्रिब्यूनल द्वारा किया जाना था और सामान्य तौर पर दुर्लभ अवसरों पर ऐसी अपीलें दो साल की समाप्ति से पहले सुनी और निपटाई जाती थीं। आयकर अधिकारी के आदेश की तारीख जिसे आयुक्त ने गलत माना था। अक्सर ऐसी अपीलें दो साल की उक्त अवधि की समाप्ति के बाद सुनवाई के लिए आती थीं - यह तथ्य पूरी तरह से ज्ञात था और विधानमंडल के विचाराधीन था जब उसने 1948 में अधिनियम में धारा पेश की थी। इन परिस्थितियों में क्या विधायिका का इरादा उन अपीलीय शक्तियों को कम करने या कम करने का था जो उसने उप-धारा (4) के तहत अपीलीय न्यायाधिकरण को बहुत व्यापक

शब्दों में उप-धारा (2) (बी) अधिनियमित करके आयुक्तों पर एक समय सीमा निर्धारित करके प्रदान की थी। आयकर अधिकारी के एक गलत आदेश को संशोधित करने की शक्ति, जब आयुक्त स्वप्रेरणा से नहीं बल्कि अपीलीय प्राधिकारी के निर्देश के अनुसरण में या उसका पालन करने की मांग कर रहा था? निर्धारिती द्वारा जिस निर्माण के लिए तर्क दिया गया और जिसे उच्च न्यायालय का समर्थन मिला, उसके अनुसार उत्तर सकारात्मक था क्योंकि उप-धारा (2) (बी), इसके शाब्दिक निर्माण पर, पूर्ण थी। हमारे विचार में इस तरह के शाब्दिक निर्माण से स्पष्ट रूप से बेतुका परिणाम होगा, क्योंकि किसी दिए गए मामले में, वर्तमान मामले की तरह, जहां अपीलीय प्राधिकारी (ट्रिब्यूनल) ने पाया है कि (ए) आयकर अधिकारी का आदेश पूर्वाग्रहपूर्ण होने के कारण स्पष्ट रूप से गलत है राजस्व के हितों के लिए और (बी) आयुक्त का आदेश प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन होने के कारण टिकाऊ नहीं है, अपीलीय प्राधिकारी को अपनी अपीलीय शक्तियों का प्रयोग कैसे करना चाहिए? जाहिर तौर पर यह अपने हाथ नहीं रोक सकता था और आयुक्त के आदेश में हस्तक्षेप करने से इनकार नहीं कर सकता था, क्योंकि यह आयुक्त के गलत आदेश को कायम रखने के समान होगा, न ही यह आयकर अधिकारी के आदेश के बारे में कुछ भी किए बिना आयुक्त के गलत आदेश को रद्द या अलग कर सकता था, जिसके परिणामस्वरूप आयकर अधिकारी के आदेश को कायम रखा जा सकेगा, जो कि राजस्व के लिए प्रतिकूल होने के कारण स्पष्ट रूप से गलत

पाया गया था। लेकिन ऐसा परिणाम उच्च न्यायालय द्वारा अपनाए गए दृष्टिकोण से निकलेगा, जिसने माना है कि ट्रिब्यूनल ने आयुक्त के आदेश को रद्द करने में ठीक से काम किया, लेकिन निर्धारिती को अवसर देने के बाद उसे कार्यवाही को नए सिरे से निपटाने का निर्देश देने में ठीक से काम नहीं किया। विधायिका द्वारा इस तरह के स्पष्ट रूप से बेटुके परिणाम का इरादा कभी नहीं किया जा सकता था। इसके अलावा, हमारे सामने निर्धारिती के वकील ने यह स्वीकार किया था कि अपनी अपीलिय शक्तियों का प्रयोग करते हुए, ट्रिब्यूनल के पास आयुक्त या आयकर अधिकारी से रिमांड रिपोर्ट मांगने और आयकर में सुधार करने का अधिकार है। अधिकारी करदाता को अवसर देने के बाद गलत आदेश देते हैं और ऐसा करने पर परिसीमन का कोई प्रश्न ही नहीं उठता। उनके द्वारा यह भी विवादित नहीं था कि आयुक्त के आदेश को रद्द करने और अपने गलत आदेश को सुधारने के लिए आवश्यक निर्देश देने के लिए मामले को सीधे आयकर अधिकारी को भेजने के लिए ट्रिब्यूनल के लिए यह समान रूप से खुला था और उसके बाद आयकर अधिकारी आगे बढ़ सकता था। ट्रिब्यूनल के निर्देश के अनुसार, माना जाता है कि, उप-धारा (2) (बी) के तहत सीमा की रोक केवल आयुक्त के नए सिरे से मूल्यांकन करने की शक्ति पर थी, न कि आयकर अधिकारी पर। यदि यह सही स्थिति है तो यह गंभीर रूप से विसंगतिपूर्ण है कि ट्रिब्यूनल को आयुक्त के आदेश को रद्द करने और नए सिरे से मूल्यांकन करने के लिए मामले को वापस आयुक्त के पास

भेजने की स्थिति में नहीं होना चाहिए क्योंकि इस बीच दो साल की सीमा अवधि समाप्त हो चुकी है। क्योंकि, इसका मतलब यह होगा कि ट्रिब्यूनल को सीधे आयुक्त के माध्यम से वांछित प्रभाव प्राप्त करने से रोका गया था, लेकिन यह अप्रत्यक्ष रूप से आयुक्त अधिकारी के माध्यम से ऐसा कर सकता था। उप-धारा (2) (बी) पर रखे गए एक शाब्दिक निर्माण से ऐसे स्पष्ट रूप से बेतुके और असंगत परिणाम सामने आएंगे, जो हमें नहीं लगता कि विधानमंडल द्वारा अपेक्षित थे। ये विचार हमें उप-धारा (2) (बी) के शब्दों को पुनरीक्षण में आयुक्त के स्वतः प्रेरित आदेशों पर लागू करने के लिए मजबूर करते हैं, न कि उप के तहत अपीलीय न्यायाधिकरण द्वारा पारित निर्देश या आदेश के अनुसार उनके द्वारा किए गए आदेशों पर लागू होते हैं। धारा (4) या किसी अन्य उच्च प्राधिकारी द्वारा। ऐसा निर्माण इस सिद्धांत के अनुरूप होगा कि अनुभाग के सभी हिस्सों को एक साथ समझा जाना चाहिए और उसके प्रत्येक खंड को संदर्भ और उसके अन्य खंडों के संदर्भ में समझा जाना चाहिए ताकि उस विशेष प्रावधान पर किया गया निर्माण एक सुसंगत अधिनियम बन सके।

उपरोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए हमारी स्पष्ट राय है कि धारा 33 बी की उप-धारा (2) (बी) के निर्माण पर सोलंकी मामले (सुप्रा) में बॉम्बे उच्च न्यायालय द्वारा लिया गया दृष्टिकोण सही है और हम इसे स्वीकार करते हैं यह। साबित्री देवी अग्रवाल मामले (सुप्रा) में असम उच्च न्यायालय ने एक विपरीत दृष्टिकोण अपनाया और माना कि अधिनियम की

धारा 33 बी (4) के तहत दो साल की अवधि समाप्त होने के बाद मामले को आयुक्त के पास भेजना न्यायाधिकरण के लिए उचित नहीं होगा। आदेश को संशोधित करने की मांग की गई। निर्णय इन पहलुओं पर आधारित प्रतीत होता है: (ए) राजकोषीय कानून होने के नाते इसे सख्ती से समझा जाना चाहिए, उप-धारा (2) (बी) में निहित सीमा की पट्टी पूर्ण और अयोग्य थी और इसमें सभी प्रकार के शामिल थे आदेश और (सी) कि धारा 34 (3) के दूसरे प्रावधान के विपरीत, धारा 33 बी (2) (बी) के तहत आयुक्त की शक्ति पर सीमा की बाधा को हटाने या शिथिल करने का कोई प्रावधान नहीं था और चूंकि धारा 33 बी के रूप में साथ ही धारा 34 (3) को दूसरे प्रावधान के साथ 1948 के उसी संशोधन अधिनियम द्वारा अधिनियम में पेश किया गया था, धारा 33 बी में सीमा की बाधा को हटाने या शिथिल करने का प्रावधान करने के लिए एक जानबूझकर चूक की गई थी और इस तरह की चूक के लिए उपाय रखा गया था विधायिका के साथ, न्यायालय के साथ नहीं। असम उच्च न्यायालय ने इस तथ्य की ओर भी इशारा किया कि 1961 के अधिनियम के तहत विधानमंडल ने धारा 263 (3) में सीमा की बाधा को हटाने या ढील देने का प्रावधान किया था। जहां तक पहलू (बी) का संबंध है, हम पहले ही ऊपर इस पर विचार कर चुके हैं। जहां तक पहलू (ए) का संबंध है, यह अच्छी तरह से स्थापित है कि यह सिद्धांत कि राजकोषीय कानून को सख्ती से समझा जाना चाहिए, केवल कर प्रावधानों जैसे कि चार्जिंग प्रावधान या जुर्माना

लगाने वाले प्रावधान पर लागू होता है, न कि कानून के उन हिस्सों पर जिनमें मशीनरी प्रावधान शामिल हैं और किसी भी तरह से धारा 33 बी को चार्जिंग प्रावधान के रूप में नहीं माना जा सकता है। पहलू के संबंध में (सी) हम पहले ही ऊपर बता चुके हैं कि एक कारण चूक का तुरंत अनुमान नहीं लगाया जा सकता है और यह केवल इस तथ्य से अनुमान नहीं लगाया जा सकता है कि दोनों एस.एस. 1948 के उसी संशोधन अधिनियम द्वारा अधिनियम में 33 बी और 34 (3) के साथ दूसरे प्रावधान को एक साथ शामिल किया गया था और पूर्व के मामले में कोई शिथिल प्रावधान नहीं किया गया था जैसा कि बाद के प्रावधान के मामले में किया गया था, सबसे पहले क्योंकि दोनों प्रावधान अलग-अलग क्षेत्रों में संचालित होते हैं और दूसरी बात, संशोधन के विभिन्न चरणों की तुलना किए बिना ऐसा करना अनुचित होगा, जिसके माध्यम से इन प्रावधानों का प्रत्येक सेट शुरुआत से गुजरा है। 1961 के अधिनियम में विधायिका ने धारा 263 (3) में सीमा की बाधा को हटाने या ढील देने के लिए आवश्यक प्रावधान किया है, जो हमारे विचार में, बहुत अधिक परिणाम देने वाला नहीं है। इस सवाल के बावजूद कि क्या धारा 34 (3) का दूसरा परंतुक पूर्व प्रमुख कौटेला अधिनियमित किया गया था या नहीं (जिस पर परस्पर विरोधी विचार प्राप्त होते हैं), हमारे लिए यह स्पष्ट है कि 1961 अधिनियम की धारा 263 (3) को पूर्व के रूप में माना जाना चाहिए प्रमुख कौटेला प्रावधान. माना जाता है कि, जिस समय 1961 के अधिनियम में उक्त

प्रावधान लागू किया गया था, उस समय बॉम्बे का दृष्टिकोण प्रभावी था और किसी अन्य उच्च न्यायालय के विपरीत कोई निर्णय नहीं था। जाहिर है, इसलिए, धारा 263 (3) के अधिनियमन को उस कानून की घोषणा के रूप में माना जाना चाहिए जो पहले से ही प्रचलित था और इस स्थिति को आयकर विधेयक 1961 के खंडों पर नोट्स में स्पष्ट किया गया है जहां यह कहा गया है कि उप- धारा 263 का खंड (3) नया था और सोलंकी मामले (सुप्रा) में बॉम्बे उच्च न्यायालय के फैसले में अनुभव की गई कठिनाई (गलत तरीके से बताई गई) से छुटकारा पाने के लिए जोड़ा गया था। इसलिए, 1961 के अधिनियम में एक पूर्व प्रमुख प्रावधान का अधिनियमन, 1922 के अधिनियम के तहत न्यायिक घोषणा के परिणामस्वरूप प्राप्त कानूनी स्थिति की विधायी मान्यता होगी। इसलिए, हमारे विचार में, असम मामले का निर्णय गलत तरीके से किया गया था।

अब पूरन मॉल्स मामले (1974) 96 आईटीआर 390 में इस न्यायालय के निर्णय का संदर्भ लिया जा सकता है, जिसमें आयकर अधिनियम, 1961 की धारा 132 के तहत उत्पन्न होने वाली एक समान स्थिति, इस न्यायालय द्वारा उप को एक प्रतिबंधित निर्माण प्रदान किया गया था। -उसकी धारा (5) जिसमें परिसीमा की निश्चित अवधि निर्धारित की गई है। उस मामले में 1961 अधिनियम की धारा 132 (1) के तहत जारी एक प्राधिकरण के अनुसार 15 और 16 अक्टूबर, 1971 को पी, एक व्यक्ति के निवास और व्यावसायिक परिसर और फर्मों के कुछ कार्यालय

परिसरों में तलाशी ली गई थी। जिसमें वह भागीदार था, और आभूषण, नकदी और खाता पुस्तकें जब्त कर ली गईं। दो बैंकों की भी तलाशी ली गई और उन बैंकों के पास गिरवी रखी गई 114 चांदी की छड़ों के संबंध में धारा 132 (3) के तहत एक निरोधक आदेश दिया गया, इस आधार पर कि वे पी की संपत्ति थीं। 12 जनवरी 1972 को, आय- कर अधिकारी ने इस आधार पर धारा 132 (5) के तहत एक सारांश आदेश पारित किया कि जब्त की गई सभी संपत्तियाँ और 114 चांदी की छड़ें पी की थीं। इसके बाद, पी एंड संस, उन फर्मों में से एक जिसमें पी भागीदार था, और पी ने एक रिट दायर की 12 जनवरी, 1972 के आदेश को चुनौती देते हुए उच्च न्यायालय में याचिका दायर की गई और 6 अप्रैल, 1977 को पक्षों की सहमति के आधार पर उच्च न्यायालय ने आदेश को रद्द कर दिया और विभाग को एक अवसर देकर नए सिरे से जांच करने की अनुमति दी। याचिकाकर्ता और दो महीने के भीतर एक नया आदेश पारित करें। एक नई जांच के बाद आयकर अधिकारी ने 5 जून, 1972 को एक आदेश पारित किया, जिसमें कहा गया कि चांदी की छड़ें पी, व्यक्ति की थीं, न कि फर्म, पी एंड संस की। इसके बाद, फर्म और पी ने दूसरे आदेश को चुनौती देते हुए फिर से एक रिट याचिका दायर की। उच्च न्यायालय ने माना कि आयकर अधिकारी के पास धारा 132 (5) में निर्धारित अवधि से परे उस आदेश को पारित करने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं था और आदेश को रद्द कर दिया और चांदी की 114 छड़ें वापस करने का निर्देश दिया। इस

न्यायालय ने अन्य बातों के साथ-साथ यह माना कि धारा 132 (12) के तहत दिए गए निर्देश के अनुसरण में या रिट कार्यवाही में न्यायालय द्वारा दिया गया आदेश, धारा 132 (5) के तहत निर्धारित सीमाओं के अधीन नहीं था। पृष्ठ 394 पर इस न्यायालय ने इस प्रकार कहा है:

"भले ही धारा 132 (5) के तहत तय की गई समयावधि को अनिवार्य माना जाता है, जिसे पहले आदेश दिए जाने पर संतुष्ट किया गया था। इसके बाद, यदि धारा 132 (12) के तहत या रिट कार्यवाही में न्यायालय द्वारा कोई निर्देश दिया जाता है, जैसा कि इस मामले में है, हमें नहीं लगता कि इस तरह के निर्देश के अनुसरण में किया गया आदेश धारा 132 (5) के तहत निर्धारित सीमाओं के अधीन होगा। एक बार नब्बे दिनों के भीतर आदेश दिए जाने के बाद पीड़ित व्यक्ति को संपर्क करने का अधिकार मिल जाता है धारा 132 (11) के तहत अधिसूचित प्राधिकारी को तीस दिनों के भीतर और वह प्राधिकारी आयकर अधिकारी को एक नया आदेश पारित करने का निर्देश दे सकता है। हम उत्तरदाताओं की ओर से इस तर्क को स्वीकार नहीं कर सकते कि ऐसा नया आदेश भी नब्बे दिनों के भीतर पारित किया जाना चाहिए। यह धारा 132 की उपधारा (11) और (12) को हास्यास्पद और बेकार बना देगा।"

यह बताया जा सकता है कि धारा 132 में धारा 132 (5) में निहित सीमा की पट्टी को हटाने या शिथिल करने का कोई प्रावधान नहीं है जो आयकर अधिकारी को किसी उच्च प्राधिकारी द्वारा जारी किए गए किसी भी निर्देश के अनुसार नए सिरे से आदेश पारित करने में सक्षम बनाता है। धारा 132 (12) और फिर भी इस न्यायालय ने यह विचार किया कि धारा 132 (5) के तहत निर्धारित सीमा केवल आयकर अधिकारी द्वारा किए जाने वाले प्रारंभिक आदेश पर लागू होगी, न कि उस आदेश पर जो इसके द्वारा किया जाएगा। उसे बोर्ड या अधिसूचित प्राधिकारी के निर्देश के अनुसार। संबंधित प्रावधानों को एक साथ पढ़ा गया और इस तरह के निर्माण को धारा 132 की उप-धारा (5) पर रखा गया, जिससे पूरे कानून का एक सुसंगत अधिनियम बनाया गया।

परिणामस्वरूप, हमारी राय है कि उच्च न्यायालय द्वारा संदर्भित दूसरे प्रश्न के दूसरे पहलू पर दिया गया उत्तर स्पष्ट रूप से गलत था और, हमारे विचार में, ट्रिब्यूनल ने आयुक्त के आदेश को रद्द करने और आयुक्त को निर्देश देने का आदेश दिया प्रतिवादी-निर्धारिती को उचित अवसर देने के बाद नए सिरे से मूल्यांकन करना उचित था। तदनुसार अपील की अनुमति दी जाती है लेकिन इन परिस्थितियों में, लागत के संबंध में कोई आदेश नहीं दिया जाएगा।

अपील की अनुमति दी गई.

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक रेखा चौधरी (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।